संपादकीय...

दबाव में बच्चे

बचपन में अपने साथ हुई बुलीइंग को भले ही हम भुला दें पर इसका नकारात्मक प्रभाव वयस्क होने के बाद भी देखा जा सकता है। बुलीइंग का मतलब है दबाव डालना या धौंस दिखाना, चिढ़ाना-मजाक उड़ाना या पीटना। लंदन में हुए एक शोध में कहा गया है कि किशोरावस्था में बुलीइंग का शिकार होने वालों में से 40 प्रतिशत के मनोरोगी होने की आशंका रहती है। मनोरोग के लक्षण प्रायः तब उभरते हैं जब बच्चे 20-25 की उम्र में पहुंचते हैं। मनोरोगों में डिप्रेशन प्रमुख होता, जिसके चलते उन्हें नौकरी मिलने में दिक्कत होती है। लैंकस्टर यूनिवर्सिटी मैनेजमेंट स्कूल के अर्थशास्त्र विभाग में असोसिएट रह चुकीं एम्मा गॉरमैन ने अपनी इस स्टडी के लिए यूके के 7000 छात्र-छात्राओं को चुना। उन्होंने पहले उनसे तब बात की जब वे 14-16 की उम्र के थे। उसके बाद तकरीबन दस वर्षों तक उनसे समय-समय पर बातचीत की गई। गॉरमैन ने पाया कि टीनेजर्स की बुलीइंग मुख्यतः स्कूल में होती है। लड़कियां भावनात्मक बुलीइंग का शिकार होती हैं, जैसे अपने ग्रुप से अलग-थलग कर दिया जाना, दोस्तों का बातचीत बंद कर देना या किसी बात को लेकर चिढ़ाना। दूसरी तरफ लड़के हिंसक बुलीइंग का शिकार ज्यादा होते हैं। यह अध्ययन भले ही विदेश में किया गया हो, पर दुनिया भर के बच्चों पर लागू होता है। विकसित देशों में बच्चों को कानून के तहत कई अधिकार मिले हुए हैं। इसलिए उन्हें मां-बाप या किसी और रिश्तेदार की बुलीइंग का शिकार नहीं होना पड़ता है। भारत में तो बच्चे सबसे ज्यादा पिता, चाचा या दादा की बुलीइंग का शिकार होते हैं। हमारे यहां संयुक्त परिवारीय मूल्य के तहत पारिवारिक अनुशासन का अच्छा-खासा आतंक रहा है। न सिर्फ परिवार बल्कि पास-पड़ोस की आंखें भी एक बच्चे के पीछे लगी रहती हैं। एक बच्चे के 'भले' होने का अर्थ है कि वह चुपचाप बड़ों की आज्ञा मानता रहे। अगर बच्चा अपनी मर्जी से कुछ भी करता है या अपनी आंखों से दुनिया देखने की कोशिश करने लगता है तो उसे मौखिक उपदेश से लेकर पिटाई तक झेलनी पड़ती है। उसे वह बनने की कवायद करनी पड़ती है जो घर के लोग चाहते हैं। इस तरह उसकी इच्छा, कल्पनाशीलता और सर्जनात्मकता की बलि चढ़ जाती है। घर में आमतौर पर संवाद का माहौल नहीं रहता। मां-बाप बच्चों से बात नहीं करते। उसकी शिकायतों, उसकी परेशानियों को जानने की कोशिश नहीं करते। ऐसे में बच्चे के भीतर बहुत-सी बातें दबी रह जाती हैं, जो धीरे-धीरे कुंठा का रूप ले लेती हैं। बड़ा होने पर ऐसे लोग कोई पहलकदमी नहीं कर पाते। वे नए विचार खोजने के बजाय बस आदेश का पालन करते हैं। इनमें से कई ऊपर से भले ही शांत दिखते हों पर कई मौकों पर वे उग्र हो जाते हैं। ऐसे ही कुंठितों में से कुछ बलात्कारी भी निकलते हैं। परिवारों और स्कूलों में संवाद का माहौल बनना चाहिए ताकि बच्चों का स्वाभाविक विकास हो सके।

सदी के ज्वलंत मुद्दों की तथ्यपरक पड़ताल

'नान्या' बाल उपन्यास है, जिसका कथानक अत्यंत संक्षिप्त है और पात्र सीमित हैं। इसमें उठाये गये प्रश्न इतने विराट और गंभीर हैं कि उन्हें 21वीं सदी के ज्वलंत प्रश्नों से मुठभेड़ करते देखा जा सकता है। यह उपन्यास सन् 76 में लिखा जा चुका था और प्रकाशित इसी वर्ष हुआ है। इस दृष्टि से इसमें लगभग तीस वर्ष के आजाद भारत को देखा जा सकता है। उपन्यास के बाल नायक नान्या का गांव की ही लड़की द्वारा बहला-फुसलाकर यौन-उत्पीड़न करना, महात्मा गांधी द्वारा गोरों को भगाना, दादी द्वारा नान्या को सुनाई गयी पौराणिक कथाओं के प्रति जिज्ञासा और अनुभवी दादी द्वारा दिये गये जवाबों में देश के गंभीर और आर्थिक समाधान, पूरे उपन्यास को हिंदी की सहबोली मालवी में लिखा जाना, नन्हे नान्या का गांव लौटते हुए बस से घायल होना, ठेठ देशज और स्थानीय बोली में निर्मित गांव का देसी और सात्विक परिवेश और लेखक की उक्ति, 'जहां आजादी के अड़सठ वर्षों बाद, आज भी कोई मोटर नहीं जाती' जैसे वर्तमान भारत की कलई खोलते प्रश्न इस उपन्यास का ताना-बाना बुन रहे हैं।

मीरा गौतम

कथा मध्यप्रदेश के देवास जिले के पीपलरावां गांव में आकार ग्रहण करती है जहां, नान्या अपने दादा-दादी के साथ रहता है। वह अपने नन्हे कद से बड़ा ही दुखी है। उसका मन खेल-खिलौनों में रमा रहने से दादा ने गुस्से में उसके खिलौने छज्जे पर पटक दिये हैं। उसे दादा जैसा ऊंचे होने की धुन सवार हो गयी है। और तो और, बस्ता टांगने के लिए भी उसे पैर उचकाने पड़ते हैं। चौकी सरकाकर, भगौना औंधा करके उस पर चढ़कर वह बस्ता टांगता है। छज्जे से खिलौने तो उतारने ही उतारने हैं। अक्षर मिलाकर शब्द तो वह पढ़ने ही लगा है। फुर्तीला होने के लिए सुबह-सुबह बकरी का दूध पीने जाता है। प्रेमा ने ऊंचा होने का गुप्त रहस्य उसे इस कसम के साथ बताया है कि ऊंचा होने के लिए जो काम उसने नान्या के साथ किया है उसे वह किसी को न बताए। अन्यथा वह छोटा का छोटा ही रह जायेगा। प्रेमा ने प्रलोभन दिया कि उसने ऊंटनी का दूध पिया है और वह उसे ऊंटनी जैसा ऊंचा बना सकती है। जो-जो प्रेमा कहती जाए उसे वह माने और करे। नान्या प्रसन्न है। उसे ऊंचा होने का नुस्खा हाथ लग गया है। अपने साथ की गयी प्रेमा की करतूत का अर्थ वह नहीं समझ पाता। वह सबको हुमककर बताना चाहता है परंतु छोटा रह जाने का भय और प्रेमा की कसम उसे रोक देती है। पहले भी प्रेमा उसके दांत और बत्तीसी की तारीफ करके कई बार उसे दबोच चुकी है।

इस यौन-उत्पीड़न को अब कहां रखें। यहां तो गांव में यह हरकत एक युवा लड़की कर रही है। तो, पुरुष ही जिम्मेदार क्यों? 'मम्मी टू' का बवंडर जैसे उठा था वैसे ही बैठ भी गया। विदेशों से आकर भारत में पांव जमाने वाला 'स्त्री-विमर्श' अपनी प्रासंगिकता खो चुका है। सदी में बदल रही सामाजिक-संरचना में अब इसे नया 'काम-विमर्श' कहें तो ही बेहतर होगा। उपन्यास में दूसरा नया प्रयोग पूरे उपन्यास को मध्यप्रदेश की मालवी में लिखा जाना है। धर्मवीर भारती इसे 'धर्मयुग' में धारावाहिकों में प्रकाशित करना चाहते थे। इस आग्रह के साथ कि इसके देशज शब्दों को तद्भव में कुछ इस तरह ढाल लिया जाए कि पाठक इससे तादात्म्य स्थापित कर सकें। इस उपन्यास में लेखक ने पूरे कथानक का नरेशन ही मध्यप्रदेश के देवास जिले के इंटीरियर गांव पीपलरावां की देशज और स्थानीय बोली में किया है जिस पर गुजराती, राजस्थानी, मराठी और अन्य प्रांतीय बोलियों का प्रभाव है। अब जाकर लेखक बेटे पुनर्वसु ने इसे प्रकाशित कराया है। इस दृष्टि से जरूरी है कि प्रांतीय बोलियों को समझे बिना हिंदी की ताकत को पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। कथा में नान्या आजादी के दिन पैदा हुआ है। नयी-नयी जिज्ञासाएं उसकी अंतर्चेतना में पंख खोल रही है। दादी के दिमाग की पेटी में हर परचे के हल हैं। सदी की तीव्रगामी दौड़ में माता-पिता के पास समय ही नहीं है कि बच्चे के सवालों का निपटारा कर सकें। पाठशाला के सहपाठी बोंदू ने जो गुर बताए, उससे वह पूरा ही बदल गया। नान्या क्लास के पीछे बैठने लगा है। कंचे खेलने लगा है।

बोंदू ने पढ़ाया कि शिव की जलहरी पर जल चढ़ाने से वह सांप के मुंह में ताला मार देते हैं। नान्या बेखौफ होकर रात को घने अंधेरे में बोंदू के साथ कुण्डली मारे सांपों के नीचे से गड़ा धन निकालने पहुंच जाता है। नान्या बेहोशी की हालत में घर लाया जाता है। तब दादा-दादी उसे शहर भेज देते हैं। उसकी छोटी बहन शहरी 'एटिकेट' सिखाते हुए उसे गंवार होने का अहसास करा देती है। शहरी हिंदी उसे समझ नहीं आती। ट्रेन देखी नहीं। बिस्कुट देखे नहीं। बेहद भूख लगने पर वह साहब के कुत्ते की रोटी खा जाता है। नान्या का पिता सेरगाम (शहर) में एक एहलकार के काम में सहयोग देता है। रात को उसे अकेले बरामदे में तख्त पर सुला दिया जाता है। नान्या व्यथित होकर बिना रास्ता जाने-पहचाने गांव लौटने की ठान लेता है। इस कवायद में वह मोटर के नीचे आकर घायल हो जाता है। वह स्वयं को दादी की गोद में बैठा पाता है। यही तत्कालीन भारत के शहर और गांव के रिश्तों की तस्वीर है।

उपन्यास की नायिका दादी पढ़ी नहीं हैं परंतु उसकी बातें लाजवाब हैं। गांव छोड़कर शहर भागने वालों पर उसकी गहरी प्रतिक्रिया है, 'जब कुण्डी में पानी, कोठी में नाज, ग्वाड़ा में गाय और हाथ में हरकत-बरकत होय तो गांव का कांकड़ छोड़ हम सेरकाम क्यों जावां?' कृष्ण की कांकर मारकर दही-दूध की मटकी फोड़ने पर दादी कहती है, 'श्रीकृष्ण भगवान नई चाहता था कि गांव को दूध बाहर बिके।' सही है, पहले अपना पेट भर जाये तो दूसरों को दो। मथुरा में दूध-मक्खन नहीं बिकने जायेगा।

कुल मिलाकर उपन्यास की एक-एक ध्वनि और बोल में तत्कालीन भारत प्रतिबिंबित हो रहा है। इसे गहरे रूप में समझने के लिए मालवी शब्दकोश के पन्नों से गुजरना ही होगा।

खतरे में समुद्री जीव-जंतु

प्लास्टिक कचरे की समस्या से आज समूचा विश्व जूझ रहा है. इससे मानव ही नहीं बल्कि समूचा जीव-जंतु एवं पक्षी जगत प्रभावित है. इस पर यदि शीघ्र अंकुश नहीं लगाया गया तो आने वाले समय में स्थिति और विकराल हो जाएगी. कहने का तात्पर्य यह कि उस समय स्थिति की भयावहता का इस बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि उस समय प्राणी जगत यानी जीव-जंतुओं एवं पक्षियों का अस्तित्व ही समाप्ति के निकट होगा. देखा जाए तो आज प्लास्टिक कचरा पर्यावरण और जीव-जगत के लिए गंभीर खतरा बन चुका है. वैज्ञानिकों के शोध-अध्ययन इसके के प्रमाण हैं. एक अध्ययन में कहा गया है कि बढ़ते प्लास्टिक कचरे के कारण धरती की सांस फूलने लगी है. सबसे बड़ी चौंकाने वाली और खतरनाक बात यह है कि यह समुद्री नमक में भी जहर घोल रहा है. इससे मनुष्य के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव अवयंभावी है. इस सच्चाई को झुठलाया नहीं जा सकता. कारण यह है कि प्लास्टिक एक बार समुद्र में पहुंच जाने के बाद विषाक्त पदार्थों और प्रदूषकों के लिए चुम्बक बन जाते हैं. अमेरिका के लोग हर साल प्लास्टिक के 660 से अधिक कण निगल रहे हैं. अध्ययनों ने इसे प्रमाणित भी कर दिया है. यही नहीं असलियत तो यह है कि धरती पर घास-फूस पर अपना जीवन निर्वाह करने वाले जीव-जंतु भी प्लास्टिक से अपनी जान गंवा ही रहे हैं, समुद्री जीव-जंतु, मछलियां और पक्षी भी इससे अपनी जान गंवाने को विवश हैं. आर्कटिक सागर के बारे में किये गए शोध और अध्ययन और चौंकाने वाले हैं. शोध के अनुसार 2050 में इस सागर में मछलियां कम होंगी और प्लास्टिक सबसे ज्यादा. आर्कटिक के बहते जल में इस समय 100 से 1200 टन के बीच प्लास्टिक हो सकता है जो तरह-तरह की धाराओं के जरिये समुद्र में जमा हो रहा है. प्लास्टिक के यह छोटे-बड़े टुकड़े सागर के जल में ही नहीं पाए गए हैं बल्कि यह मछलियों के शरीर में भी बहुतायत में पाए गए हैं. ग्रीनलैंड के पास के समुद्र में इनकी तादाद सर्वाधिक मात्रा में पाई गई है. इसमें दो राय नहीं कि दुनिया के तकरीब 90 फीसद समुद्री जीव-जंतु-पक्षी किसी न किसी रूप में प्लास्टिक खा रहे हैं. यह प्लास्टिक उनके पेट में ही रह जाती है जो उनके लिए जानलेवा साबित हो रही है. यह प्लास्टिक प्लास्टिक के थैलों, बोतल के ढक्कनों और सिंथेटिक कपड़ों से निकले प्लास्टिक के धागे शहरी इलाकों से होकर सीवर और शहरी कचरे से बहकर नदियों के रास्ते समुद्र में आती है.

ट्विटर पर अफगान संग्राम

अब ट्विटर राजनयिक महत्ता के विचित्र दौर में पहुंच गया लगता है। गंभीर राजनयिक द्वंद्व के लिए शायद ही किसी राष्ट्राध्यक्ष ने ट्विटर को इस तरह से इस्तेमाल करने की सोची होगी, जैसा कि डोनाल्ड ट्रंप और इमरान खान ने कर डाला। ट्रंप के ट्वीट के जवाब में पाक प्रधानमंत्री इमरान खान ने सिद्ध कर दिया कि यह राम मिलाई जोड़ी ही है। अमेरिका ने आरोप लगाया कि 'ये हमारा पैसा खाते हैं परंतु हमारे लिए कुछ भी नहीं करते।' इस पर इमरान खान ने कहा कि 9/11 के आक्रमण में कोई भी पाकिस्तानी नहीं था और पाक ने हमेशा से अमेरिका के आतंकवाद के खिलाफ युद्ध में उनका साथ दिया। करीब 75 हज़ार पाकिस्तानी आतंकवाद के खिलाफ युद्ध में मारे गए और पाक ने लगभग 123 अरब डॉलर का नुकसान सहा है जबकि यूएस की सहायता बस 20 अरब डॉलर की थी। इमरान को मालूम है कि अमेरिका पाक को गंभीरता से नहीं लेता। इमरान खान के कथनानुसार अमेरिका को आत्मनिरीक्षण की आवश्यकता है तो पाक को भी कहीं ज्यादा आत्मनिरीक्षण की आवश्यकता है। जिन लोगों ने वायु यानों को अपहृत किया था उनमें से कोई भी पाकिस्तानी नहीं था। परंतु उनका मास्टरमाइंड खालिद शेख मोहम्मद कराची में बैठा हुआ था। दरअसल, ओसामा के अलावा अलकायदा के बड़े आतंकवादी या तो पाक में मारे या गिरफ्तार किए गए। आखिर सभी आतंकवादियों की शरणगाह पाकिस्तान ही क्यों होता है। अफगानिस्तान में सेना से लड़ रहे तालिबानियों को शिक्षा पाक में ही क्यों मिलती है। जबकि अफगानिस्तान के लिए उसके पड़ोसी ने समस्याएं ही ज्यादा खड़ी की हैं। इस विवाद का अंत यह हुआ कि अमेरिका की ओर से पाकिस्तान को दी जाने वाली आर्थिक सहायता बंद कर दी गई। परंतु यह कार्रवाई एक ऐसे नाजुक समय पर हुई जब अफगानिस्तान में शांति वार्ता चल रही है। तालिबान के नेता रूस और अमेरिका दोनों से शांति वार्ता कर रहे हैं। कतर और मास्को की वार्ता का अंत शांतिपूर्ण होने की उम्मीद कम है। क्योंकि पाकिस्तान में बैठे तालिबान के कमांडर पाकिस्तान की सरकार के अनुसार ही व्यवहार करते हैं।

'मैं इस सियाह चादर का क्या करूंगी'

नाज खान

इस्मत चुगताई और रशीद जहां जैसी विद्रोही लेखिकाओं के दौर में फहमीदा रियाज एक ऐसी शायरा का नाम है, जिन्हें उनकी बेबाकी के लिये याद किया जाता रहेगा। उस दौर में भी जब महिलाओं के लिये पर्दा लाजिमी था, उनकी कलम बेबाकी से चली और उन्होंने पर्दे के विरोध में लिखा, 'हुजूर मैं इस सियाह चादर का क्या करूंगी, यह क्यों आप मुझको बख्शते हैं, बसद इनायत मैं सोग में हूं कि इसको ओढ़ूं, रबू अलम खल्क को दिखाऊं, दरोग हूं मैं कि इसकी तारीकियों में खिफ्फत से डूब जाऊं। न मैं गुनहगार हूं न मुजरिम कि इस सियाही की मुहर अपनी जबीं पर हर हाल में लगाऊं' उन्होंने न सिर्फ पाकिस्तान में मानवाधिकारों की अनदेखी कर रहे शासन के विरोध में कलम उठाई, बल्कि हिन्दुस्तान, पाकिस्तान के बीच सुलग रहे कश्मीर मुद्दे को भी सियासत के तौर पर तहरीर करते हुए नज्म लिखी 'अमन की आशा।' एक बार उन्होंने इसको लिखने का कारण कुछ इस तरह बताया था, 'इस नज्म को मैं हिन्दुस्तान में ही पढ़ना पसंद करती हूं, वहां पर लुत्फ ज्यादा आता है। वहां पर लोग इसे सुनने के बाद पत्थर मारते हैं।' उन्होंने हंस कर कहा था। वह कहती थीं, 'हम भी चाहते हैं कि कश्मीर हमको मिल जाये। कोई तो वजह है कि हमको कश्मीर नहीं मिल पाया। इसे सिर्फ अल्लाह की मर्जी तो नहीं कह सकते। कोई तो वजह है कि इस समस्या का हल नहीं निकल पाया। फिर भी दोनों देशों की सरकारों को ख्याल आता है कि इस समस्या का हल निकलना चाहिए, क्योंकि यह मसला सांप के मुंह में छछूंदर है, जिसे न उगल पा रहे हैं न निगल पा रहे हैं। इसी मसले पर एक कार्यक्रम में अमन पर बात हो रही थी। सब तकरीर कर रहे थे कि अमन लायी जाये। मैं बैठी सोच रही थी कि ये क्या बात कर रहे हैं। मेरी नज्म 'अमन की आशा' मैंने वहीं लिखना शुरू की।' 'क्यों लायें, किसलिए लायें अमन, किसलिए खत्म कर दें यह जो अरबों-खरबों का कारोबार कायम है, जंग की बदौलत जो हम नियाजमंदों का रोजगार कायम है।' उन्होंने ज्यादा नज़्में नहीं लिखीं। नस्र यानी गद्य में अधिक लिखा। शायरी में उनका उपनाम फहमीदा ही रहा। उनकी नज्मों का पहला संग्रह 'पत्थर की ज़बान 1947 में महज 21 वर्ष की उम्र में आया। इसमें उनकी कॉलेज के जमाने की नज़्में हैं। इसके अलावा उनकी कुछ नयी, पुरानी नज्मों का संग्रह 'तुम कबीर' नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें कुछ नज़्में उन्होंने भारत में रहने के दौरान लिखीं। 'तुम कबीर' के बारे में उन्होंने कहा था, 'इसे 'तुम कबीर' नाम बाद में दिया। पहले मैं इस संग्रह का नाम 'मौसमों के दायरे में' रखना चाहती थी। दरअसल, कबीर मेरे बेटे का नाम है, जो एक हादसे में मुझे छोड़ कर चला गया। मैं सोचती थी मैं कबीर की कोई यादगार कायम करूं। वह सब यादगार तो मैं कायम नहीं कर सकी, क्योंकि न मुझमें इतनी हिम्मत बची थी, न इतनी ताकत ही रह गयी थी। जो कर सकती थी वह यह किया कि अपनी किताब का नाम 'तुम कबीर' रख दिया। अब जब भी फहमीदा रियाज कि किताबों का जिक्र आयेगा, 'तुम कबीर' का भी आयेगा। बस यही कर सकती थी।'

अपनी बेबाकी के लिये मशहूर फहमीदा का उनकी किताब 'बदन दरीदा' को लेकर भी बहुत विरोध हुआ था। इस पर वह कहती थीं, 'जिस तरह से उस किताब को गलत समझा गया था, वह अब नहीं रहा है। माहौल बदला है। वरना पहले तो लिखने पर बहुत बंदिशें थीं। कोई मुझसे कह रहा था कि आप बहुत बहादुर हैं तो इसकी वजह यही है कि जो मेरे दिल में आता है मैं लिख देती हूं। इसके बाद जब उस पर बहुत शोर-शराबा होता है तो मैं बहुत रोती हूं। दुखी होती हूं इसलिए नहीं कि मैंने क्या लिख दिया इसलिए कि लोग विरोध क्यों कर रहे हैं। फिर मैं गालिब का कहा याद करती हूं कि 'होती आयी है कि अच्छों को बुरा कहते हैं।' शायरी के अलावा उन्होंने अपनी तहरीरों के जरिये भी तत्कालीन सत्ता की नीतियों के विरुद्ध आवाज बुलंद की और इसका माध्यम बनाया उन्होंने अपनी पत्रिका 'आवाज' को। नतीजे में पाकिस्तान की जियाउल हक हुकूमत में न सिर्फ उनकी कलम को बैन किया गया।

जीवन दर्शन

देशहित पहले

चुनावों में उत्तर प्रदेश के उम्मीदवारों का चयन लाल बहादुर शास्त्रीजी के हाथों में था। जिस दिन चयन-सूची लगनी थी उस दिन भारी भीड़ शास्त्रीजी के आस-पास जमा थी। चयन-सूची बोर्ड पर लगा दी गई। जब भीड़ वहां से छंट गई तो एक व्यक्ति लाल बहादुर शास्त्री के समीप आया और बोला, 'संबंधी ही वक्त पर एक-दूसरे के काम आते हैं। ऐसे में आपने हमारा नाम चुने गए उम्मीदवारों में क्यों नहीं शामिल किया।' उस व्यक्ति की बात सुनकर लाल बहादुर शास्त्री बोले, 'संबंधी अपनी जगह हैं और देश का हित अपनी जगह। यह चुनाव देशहित में किए जा रहे हैं। देश प्रतिभाशाली और ईमानदार लोगों के चुनकर आने से चलता है, संबंधियों के चुने जाने से नहीं।' यह सुनकर वह व्यक्ति लज्जित हो गया और वहां से चला गया।

- रेनू सैनी

डॉयलॉग बॉक्स

जितनी ही अधिक शक्ति होगी उसका दुरूपयोग उतना ही अधिक भयावह (खतरनाक) होगा...

संवाद

आम पाठकों के लिए मंच प्रदान करने के उद्देश्य से अभिव्यक्ति का पन्ना आरक्षित है। आपकी पाती, समसमायिक घटनाओं पर विचार, लेख, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय मसलों पर सुधि पाठकों का नजरिया पेश करने के लिए इसे रखा गया है।

लेखक केवल महानगरों नहीं बसते हैं। बस्तर भूमि में भी माटी से जुड़े विद्वानों की कमी नहीं है। हम चाहते हैं सभी को इस पन्ने में स्थान मिले और विचारों का आदान-प्रदान हो। यह संवाद आम पाठक और अखबार के बीच कायम रहे। विचारों से बस्तर में बदलाव आए, इन्हीं कामनाओं के साथ अभिव्यक्ति का यह अंक...

-संपादक

हमारा पता : संपादक
दैनिक बस्तर इम्पेक्ट, सिटी आफिस -
एच-85/A, मां दंतेश्वरी नगर, आवराभाटा दंतेवाड़ा, पिन -494449
फोन नंबर : 07856-252024
email - editor@bastarimpact.0rg

कोई भी नहीं

सैली बलजीत

इस बात का ताज्जुब होना स्वाभाविक था कि अभी कुछ देर पहले जीवित कहलाने वाला वो बूढ़ा आदमी बीच सड़क पर 'डेड बॉडी' में तब्दील हुआ पड़ा था। तांगा चरमराते हुए रुका था। अगर तांगे में बैठा कोई ग्रामीण-सा दिखने वाला आदमी एकाएक घोड़े की लगाम न थामता तो निस्संदेह सामने वाली दिशा से आ रहा तेज गतिवाला ट्रक तांगे के ऊपर चढ़ गया होता। वह बूढ़ा आदमी जो बीच सड़क पर मृतावस्था में पड़ा था, अभी कुछ देर पहले ही धड़ाम से गिरा था। तांगे के आगे बैठा हुआ घोड़े की लगाम थामे हुए था वह, जाने एकदम उसे क्या हुआ कि तांगे से नीचे लुढ़क गया। अवश्य चक्कर आ गया होगा या किसी बीमारी से त्रस्त रहा होगा। तांगे को वह बहुत ही सलीके से चला रहा था। ऐसा करते हुए वह एक निपुण तांगेवाला लग रहा था। उसकी उम्र अठहत्तर साल के आसपास की होगी, ऐसा दिखता था। तांगे को हांकते हुए, वह बस खांसने में तल्लीन रहा था बराबर। इस बीच वह सलीके से अपनी छोटी-सी बारीक बांस की छड़ी से घोड़े को हांकता रहा था। उसका ठेठ पंजाबी लहजा था। वह बार-बार घोड़े को पुचकारता, कभी दुत्कारता, पलोसता रहा था।

'ओए जिऊण जोगिआ' वह घोड़े को पुचकारता तो यही शब्द निकलते उसके मुंह से। 'ओए मर जानिआं' 'तैनूं मौत पवे' 'तेरा कख न रहे' वह घोड़े को दुत्कारते हुए ऐसी भाषा का इस्तेमाल करते हुए तांगा हांकता, तो सभी सवारियां ठहाका लेने लगतीं। उसने तांगा ठूंस कर भर रखा था सवारियों से। अभी भी उसकी तमन्ना थी कि एकाध सवारी और मिल जाती तो फेरा तगड़ा लग जाता। बीच-बीच में कोई सवारी उतरती तो वह तंबे में ठूंसी रुपयों वाली गुत्थी निकाल लेता और नोट गिनते रुपये उसमें डाल कर, सलीके से उसे सुतली से बांधकर, फिर वही तंबे में खोंस लेता। इतनी उम्र के बावजूद उसमें चुस्ती-फुर्ती इतनी थी कि वह नवंबर महीने की ठंड में भी कोई स्वेटर नहीं पहने हुए था।

अभी बस अड्डे के बाहर वह तांगे के सामने खड़ा हेक लगा था। मुश्किल से बीस मिनट हुए होंगे, इस बात को। मरियल-सा जिस्म, कमर लगभग तीर-कमान की तरह मुड़ी हुई, दाढ़ी कई दिनों से जैसे बनाई नहीं, पुराना-सा मैलयुक्त मलेशिए का कुर्ता, बिना स्वेटर डाले हुए। नीचे सफ़ेद खद्दर का कई दिनों से धुला हुआ तंबा बांध रखा था। वह बराबर चिल्ला रहा है, 'चलो आ जाओ भई बड्डे दरवाजे, मीयां मुहल्ला, अचली दरवाज़ा, पहाड़ी दरवाज़ा आ जाओ भई फटाफट'

'क्या लेगा बड्डे दरवाजे का' एक औरत सवारी पूछती है।

'आ बैठने की कर माई लेना क्या है सस्ती सवारी है तीन रुपये' 'दो रुपए लेने हैं तो बैठूं?' वह औरत तकरार करती है। 'चल बैठ गांट चल दो ही देवीं' वह बूढ़ा उस औरत को तांगे में बैठने का संकेत करते हुए फिर चिल्लाने लगता है 'चलो भई आ जाओ, बड्डे दरवाजे अचली दरवाजे चल बाऊ आ जा'

एक बाबूनुमा सवारी वहां आकर ठिठक जाती है, 'चलना कब है? अगर अभी चलना है तो चढ़ जाता हूं तांगे पर' 'पर बाऊ तांगा भर तो लेने दो अभी तो चार ही सवारियां हुई हैं' वह फिर ऊंची आवाज़ में हेक लगाने लगता है। 'तेरा तांगा तो शाम तक नहीं भरेगा कब तक बैठाए रखेगा?'

'खाली कैसे ले जाऊं बाऊ, फेरा तो भरकर लगेगा ना?' लगभग पंद्रह मिनट तक सवारियां उससे तकरार करती रही थीं। कई जने तो तांगे से उतरकर दूसरी कोई सवारी का प्रबन्ध करने की ज़िद भी करने लगे थे। तांगा पूरा भर चुका था। तीन सवारियां आगे और तीन सवारियां पीछे। लेकिन अभी भी उस बूढ़े तांगे वाले की आंखों में और सवारियां लादने की तृष्णा बाकी थी। सवारियों में एक बाबू आदमी के अतिरिक्त एक लड़की भी है।

'चल अब, क्या देखता है तांगा तो भर गया है' एक जना तांगे के पीछे बैठे हुए कहता है।

'एक सवारी ले लूं तांगे का 'उलार' ठीक कर लूं, चलना ई है काहे को चिंता करता है बाऊ?' वह ऊंची हांक लगाते हुए, इधर-उधर देखता है, 'आ जा भैणां, चलना है बड्डे दरवाजे आ जा दो रुपये-दो रुपये बड्डा दरवाजा आ जा भैण मेरिए' वह बस अड्डे से बाहर निकल रही एक औरत को कहता है जो कुछ देर तक सोचती हुई तांगे के करीब आ जाती है टुकुर-टुकुर तांगे की ओर देखती है, 'कहां बैठाओगे? कोई जगह तो है नहीं?'

'क्यों चिंता करती हो मेरी भैणाअब्बी बैठाए देते हैं पीछे से एक सवारी आगे आ जाए भई शाबाश आओ भई एक जना तू आ जा निक्केआ आ जा शाबाश' वह बूढ़ा पीछे बैठे हुए कोई स्कूटर मैकेनिक से दिखनेवाले छोकरे की ओर इशारा करते हुए कहता है। सवारियों की अदला-बदली के बाद, जब तांगा बस अड्डे से बाहर निकला तो सभी ने इत्मीनान की सांस ली थी। वह तांगे के आगे लगे बांसपर चढ़े हुए, इधर-उधर चुस्ती से देखते हुए तांगा चलाने लगा था। बीच-बीच में उसका घोड़े को पुचकारना, दुत्कारना बराबर जारी रहा था. 'ओए जिऊण जोगिआ ओए मरजानिआंतैनू मौत पवे'। बीच-बीच में वह सवारियों से भी बतियाता जा रहा था।

सड़क पर तेज रफ्तार से बस, कार, ट्रक गुजर रहे थे। वह सलीके से घोड़े को बारीक-सी बेंत से बीच-बीच में पीठ पर सहलाता रहा था। जब भी घोड़े की पीठ पर बेंत से वह धीरे से मारता, घोड़ा और तेज गति से भागने लगता।

हंसली के पुल तक आते-आते वह बूढ़ा सही सलामत था। उसने बहुत ही मंझे हुए तांगा चालक की तरह, पीछे से आ रही ट्रैफिक को दाएं हाथ से मुड़ने का इशारा करते हुए, तांगे को शहर को जाने वाली सड़क पर मोड़ दिया था। डी.ए.वी. कॉलेज लड़कियों वाला आ गया था। उस कॉलेज के गेट के सामने, शायद किसी गांव से आई हुई होस्टल में रहने वाली लड़की ने उतरने को कहा था।

लड़की ठीक कॉलेज के गेट के सामने उतरी थी, उस बूढ़े ने उससे पैसे लेते हुए तंबे में खुंसी गुत्थी में बांध लिये थे, इसके साथ ही बेंत की छड़ी, घोड़े की पीठ पर हल्की सी मार दी थी, 'चल ओए जिऊण जोगिआशाबाश'

घोड़ा सरपट भागने लगा था। इस बार घोड़ की गति कुछ तेज थी। वह बूढ़ा तांगेवाला उसी अंदाज़ में सवारियों से बतियाते हुए तांगा हांक रहा था कि एकाएक धड़ाम से लुढ़क गया था, बीच सड़क पर वह बीच सड़क पर मरा हुआ पड़ा था। सभी सवारियां हक्की-बक्की सी रह गई थीं। तांगे से सभी सवारियां उतर गई थीं।